अद्वैत की वैज्ञानिकता और स्वामी विवेकानन्द

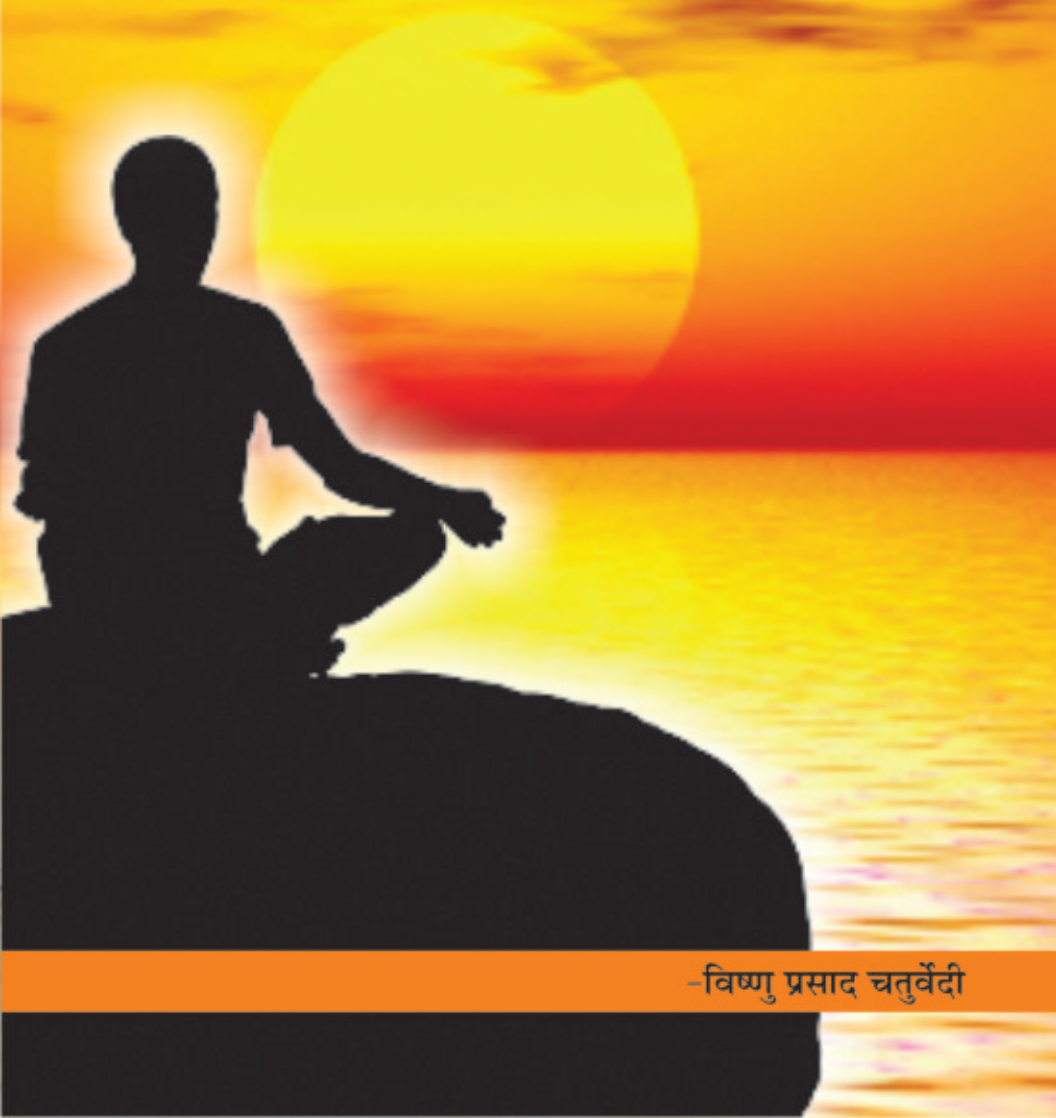

-विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

अद्वैत की वैज्ञानिकता
और
स्वामी विवेकानन्द

लेखक

विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

प्रकाशक

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ

शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,

कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053

दूरभाष : 011-22914799

website: www.abrsm.in, www.abrsm.co.in

Email: abrsmdelhi@gmail.com, abrsmdelhi@rediffmail.com,

अद्वैत की वैज्ञानिकता और स्वामी विवेकानन्द

© सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

❖ प्रथम संस्करण : महाशिवरात्री, फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशी
विक्रम संवत् 2070, युगाब्द 5115

❖ सहयोग राशि : 60/-

❖ अक्षर संयोजन :
सागर कम्प्यूटर्स, जयपुर

❖ मुद्रक :
प्रिमियर प्रिंन्टिग प्रेस, जयपुर

❖ प्रकाशक :
अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ

स्वामी विवेकानन्द

अनुक्रम

क्र.सं.	आलेख	पृष्ठ संख्या
–	प्रकाशकीय	5
–	प्रस्तावना : विज्ञानम् यज्ञम् तनुते	6
–	अपनी बात	10
1.	सबल भारत के प्रबल समर्थक : स्वामी विवेकानन्द	13
2.	स्वामी विवेकानंद और विज्ञान	17
3.	धर्म की आवश्यकता का वैज्ञानिक आधार	21
4.	स्वामी विवेकानंद व विश्व धर्म की अवधारणा	25
5.	माया का विज्ञान	29
6.	ब्रह्म और जगत की वैज्ञानिक व्याख्या	32
7.	आत्मा व पुनर्जन्म की वैज्ञानिकता ?	36
8.	वेदान्त की वैज्ञानिकता	40
9.	आत्मा का विज्ञान	44
10.	सुख का वैज्ञानिक आधार : वेदान्त	48
11.	प्रथाओं की वैज्ञानिकता ?	52
12.	वासना रहित कर्म और विज्ञान	56
13.	विश्व : वृहत ब्रह्माण्ड	59
14.	जीवनमुक्ति का वैज्ञानिक आधार	63
15.	विश्व शान्ति का वैज्ञानिक आधार	66
16.	प्राणायाम की वैज्ञानिकता	69
17.	अद्वैतवाद व वर्तमान विज्ञान	74

प्रकाशकीय

भारत के विस्तृत भू भाग पर समय-समय पर अनेकानेक महापुरुषों ने अपने जीवन कार्य द्वारा प्रेरणादायी जीवन यात्रा रचकर सम्पूर्ण संसार में सांस्कृतिक ऊँचाईयों से विश्व का मार्गदर्शन कर सकने का मार्ग बनाकर, संसार को अचम्भित कर दिया। इस वीर प्रसूता भारत माँ की वन्दना के लिए असंख्य लालों ने अपने रक्त से तर्पण कर उसकी आन-बान और शान के लिए नित नूतन आदर्श प्रस्थापित किये। इन्हीं में से एक स्वामी विवेकानन्द, भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा के एक अध्येयता बनकर अपने वैचारिक मार्गदर्शन से, जैसे भूखे संसार को अपने प्रभावी प्रस्तुतिकरण तथा अकाट्य तर्कों के माध्यम से अभिभूत कर दिया। इन्हीं सब विचारों के क्रम में स्वामी विवेकानन्द के 150 वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष में 'अद्वैत की वैज्ञानिकता और स्वामी विवेकानन्द' के विचारों को सूत्रबद्ध कर हम सभी को सहज, सरल तथा सुरूचिकर ढंग से विचार मणिकर्णिका में पिरोकर श्री विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी ने हमारे छोटे से अनुरोध पर इस पुस्तक का निर्माण किया है। उनके इस प्रयास से नवीन पीढ़ी को अद्वैत की वैज्ञानिकता का सहज अनुभव होगा और वे अपने पूर्वजों की अतुलनीय ज्ञान संपदा के भंडार पर गौरवान्वित होकर, अपने भारतीय पक्ष को पुनः दृढता से रख सकेंगे। यही आज की महती आवश्यकता है। आशा है हम सभी उनके इस प्रयास की सराहना करेंगे।

इस पुस्तक की प्रस्तावना के लेखक डॉ. जे.के. बजाज जो समाजनीति समीक्षण केन्द्र, दिल्ली के निदेशक हैं ने अपने अनुभवजन्य बिन्दुओं के माध्यम से इसकी महत्ता को दर्शाया है। इससे पुस्तक के विषय वस्तु का एक लेख ही 'गागर में सागर' प्रतीत होता है। हम उनके इस प्रयास के लिए आभार व्यक्त करते हैं।

हमें आशा ही नहीं पूर्णतः विश्वास है कि यह पुस्तक सुधी पाठकों को उपयोगी लगेगी। तभी हमारे प्रयासों की सार्थकता सिद्ध होगी।

– प्रकाशन समिति

प्रस्तावना

विज्ञानम् यज्ञम् तनुते

स्वामी विवेकानन्द का प्रादुर्भाव ऐसे समय में हुआ जब भारत अत्यंत विकट काल से निकल रहा था। उनके जन्म के पांच-छः वर्ष पूर्व स्वतंत्रता का प्रथम संग्राम लड़ा गया था। वह संग्राम पारंपरिक भारत में अंग्रेजों के विरुद्ध सौ वर्ष से अधिक लंबे संघर्ष का अंतिम प्रयास था। उन्नीसवीं शती के मध्य तक तो भारत के विभिन्न भागों में अंग्रेजों को स्वदेशी शक्तियों से सतत जूझना पड़ रहा था। बंगाल, अवध, मैसूर, मराठों और फिर पिण्डारियों में से प्रत्येक के साथ उन्हें कई-कई बार युद्ध करना पड़ा, इनमें से कई युद्ध दशकों चले। पंजाब में सिखों के विरुद्ध संघर्ष इस शृंखला में अंतिम था। इस लंबे सामरिक अभियान के पश्चात् 1848 में ही अंग्रेज संपूर्ण भारत के नियंता होने का दम भर पाये थे। और फिर 1857 में प्रायः संपूर्ण भारत उनके विरुद्ध उठ खड़ा हुआ। उस महान् संग्राम में उत्तरी भारत के सब लोगों ने अपना सर्वस्व झोंक दिया था, अंग्रेजों से मुक्ति पाने के लिये अंतिम बाजी लगी थी। दुर्दैव से भारत उस संग्राम में पराजित हुआ।

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की पराजय के पश्चात् भारत पस्त हो गया था। भारत के शिष्ट पढ़े-लिखे लोगों का भारत से, भारत की सभ्यता से, भारतीय सभ्यता के सनातन सत्य से, भारतीय रीति-नीति से और यहाँ तक कि भारतीय भाषाओं और कदाचित् भारत के लोगों से विश्वास उठ गया था। उन्हें ऐसे लगने लगा था कि भारत तो अब कालबाह्य हो गया है, अब तो सब कुछ पश्चिम से सीखकर नये सिरे से गढ़ना पड़ेगा। आत्मविश्वास का यह क्षरण कुछ सीमा तक तो 1857 से पहले ही प्रारंभ हो गया था, भारत के अनेक बड़े लोग पहले से ही भारतीय धारणाओं, विश्वासों एवं रीति-नीति को सुधार कर पश्चिमी विचारधारा के अनुरूप बनाने की बातें करने लगे थे। 1857 के बाद ऐसे विचार शिष्ट समाज में व्यापक हो गये।

ऐसे विकट काल में 1863 में स्वामी विवेकानंद का जन्म हुआ। भारत की यह विशेषता है कि जब-जब भारतीय सभ्यता संकट में होती है तब यहाँ महापुरुष जन्म लेते हैं। 1860 के उस एक दशक में ही अनेक ऐसे आलौकिक महापुरुषों का जन्म हुआ जिनका भारत के पुनरोदय में विलक्षण योगदान रहा। स्वामी विवेकानंद के अतिरिक्त मदनमोहन मालवीय, रवींद्रनाथ ठाकुर एवं महात्मा गांधी उस दशक में ही जन्मे।

स्वामी विवेकानंद ने 1893 में जब शिकागो के वैश्विक मंच पर भारतीय सभ्यता की गुरुता का प्रतिपादन किया तो भारत के पढ़े-लिखे लोगों में आत्मविश्वास की, भारत के प्रति श्रद्धा एवं आस्था की, भारतीय चिंतन के प्रति गौरव की एक नयी लहर फैल गयी। कोलंबो से अलमोड़ा तक देश जाग्रत हो उठा। फिर बीसवीं शती के प्रारंभ तक आते-आते तो अनेक महापुरुषों के प्रयास से सारे देश में स्वदेशी एवं स्वराज का नाद गूँजने लगा। भारत जाग उठा और वह जगा हुआ भारत स्वतंत्रता-प्राप्ति तक फिर सोया नहीं। स्वामी विवेकानंद ने जो अलख जगायी थी, उसका ऐसा प्रभाव हुआ।

उन्नीसवीं शताब्दी में भारत में आत्मगौरव एवं आत्मविश्वास का जो ह्रास हुआ था उसमें पश्चिमी विज्ञान के प्रति असहज मोह एवं अभिभूति के भाव का भी पर्याप्त योगदान था। हमें लगने लगा था कि भारतीय परंपरा एवं चिंतन में परलोक के प्रति इतना आग्रह है कि इहलोक की चिंता ही हमने नहीं की, लोकोत्तर परम ज्ञान की ओर दौड़ते हुए इस लोक के लिये आवश्यक सहज व्यवहारिक विज्ञान का हम तिरस्कार करते रहे हैं। हमारे चिंतन में तर्कातीत अनुभव एवं आस्था को ही सब कुछ माना गया है, इसमें तर्कसंगत चिंतन और वैज्ञानिक बुद्धि का अभाव रहा है। अब पश्चिम ने विज्ञान के युग का सूत्रपात किया है। इस युग में हमारी सुदीर्घ ज्ञान परंपरा का अब कोई स्थान नहीं रहा, अब तो पश्चिम से ही सब सीखना होगा। ऐसा भाव, पढ़े-लिखे लोगों में फैल चुका था।

अंग्रेजों को भारतीय लोगों के विज्ञान-विषयक इस हीनबोध का अनुमान था। वे इसका उपयोग भारतीयों के आत्मविश्वास के क्षरण के लिये योजनापूर्वक उपयोग करने से परे नहीं थे। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के काल में बंगाल के अंग्रेज गवर्नर रिचर्ड टेंपल का मत था कि विज्ञान की पढ़ाई करवाने से भारत के पढ़े-लिखे युवाओं के आत्मविश्वास एवं कुछ बड़ा कर पाने की उनकी लालसा को बाधित करने में सहायता मिलेगी। 1875 में उस समय के अंग्रेज वायसराय नॉर्थबरुक को संबोधित करते हुए वे लिखते हैं कि 'यह सही है कि हमारे विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के विद्यार्थी एक असंतुष्ट वर्ग का रूप लेते दिखायी देते हैं। पर यह कुछ सीमा तक इसलिये है कि हमारी शिक्षा में विधि, लोकप्रशासन और साहित्य जैसे विषयों पर अधिक बल दिया जा रहा है, इन विषयों में भारतीय विद्यार्थी हमारी समानता करने का दंभ कर सकते हैं, चाहे वैसा दंभ निश्चय ही निराधार है। जहाँ तक संभव हो हमें उनके चिंतन को व्यवहारिक विज्ञान की ओर प्रेरित करना चाहिये, तब उन्हें हमारे सामने अपनी तुच्छता एवं हीनता का बोध सहज ही हो जायेगा।'

जब रिचर्ड टेंपल कलकत्ता में यह बात कह रहे थे, उस समय स्वामी विवेकानंद उसी नगर में ईश्वरचंद्र विद्यासागर के मेट्रोपोलिटन इंस्टीट्यूशन में विद्यार्थी थे। कलकत्ता के उस समय के बौद्धिक वातावरण में व्यवहारिक विज्ञान एवं सहज तर्कसंगता के विषय में भारतीयों के गहन हीनता-बोध का अनुभव उन्हें अवश्य हुआ होगा। फिर अनेक वर्षों के गहन अध्ययन-चिंतन-मनन, अपने गुरु श्री रामकृष्ण के चरणसेवा और परिव्राजक होकर देश भर में घूमते हुए अपने भारतबंधुओं की सहज धर्मवृत्ति एवं उनके दुःख सुख का अनुभव पाने के उपरांत जब स्वामी विवेकानंद ने विश्व एवं भारत का उद्बोधन प्रारंभ किया तो भारतीय चिंतन की तर्क एवं अनुभव-गम्यता ही उनके संदेश का सार थी।

तर्क एवं अनुभव-गम्य होना विज्ञान का मूल है। विज्ञान की व्यवहारिकता भी इसी में निहित है कि तर्क एवं अनुभव के बल पर कोई भी विज्ञान के सत्य पर पहुँच सकता है। इस दृष्टि से भारत का अद्वैत दर्शन परम ज्ञान तो है ही, प्रथम विज्ञान भी है। मोक्ष का मार्ग भी यही है, और व्यवहारिक जीवन को सहजता से जीने का मार्ग भी यही है। अद्वैत दर्शन के इस पक्ष को समझाने के लिये ही स्वामी विवेकानंद व्यवहारिक अद्वैत का संदेश देते हैं।

उच्चदर्शन की गूढ़ बातों को तार्किक-व्यवहारिक ढ़ंग से प्रस्तुत करना स्वामी विवेकानंद के उपदेश की विशेषता है। इसीलिये तर्क एवं विज्ञान के उत्कर्ष के इस युग में उनके प्रवचन विदेशी एवं भारतीय पढ़े-लिखे लोगों को गहरे छू लेते हैं। शिकागो के उनके पहले संक्षिप्त प्रवचन से ही

विश्व स्तब्ध रह गया था और फिर शीघ्र ही अनेकों पढ़े-लिखे विदेशी उनके शिष्य बनते गये। इस विलक्षण सफलता में उनका असाधारण ओजस्वी व्यक्तित्व एवं भारतीय दर्शन का सहज सत्य तो कारक थे ही, उनकी प्रस्तुति की तार्किकता एवं वैज्ञानिकता का भी इसमें योगदान था। कदाचित् इसीलिये आज भी भारत में विज्ञान के विद्यार्थी और ऊँचे वैज्ञानिक स्वामी विवेकानंद के लेखन के प्रति विशेष आकर्षित होते हैं।

स्वामी विवेकानंद के लिये विज्ञान एवं ज्ञान एक दूसरे से भिन्न नहीं हैं। विश्व को जानकर ही विश्व से परे पहुँचा जाता है, अपरा विद्या को साधकर ही परा विद्या की ओर बढ़ा जाता है, नर से ही नारायण तक पहुँचा जाता है। यह सब भारत के साधारण लोग भी जानते हैं। उपनिषदों में भी विज्ञान एवं परम ज्ञान के ऐसे ही संबंध का वर्णन हुआ है। तैत्तिरीयोपनिषद् का मुमुक्षु अन्नमय, प्राणमय एवं विज्ञानमय आदि कोषों को साधकर ही आनंदमय कोष तक पहुँचता है। उपनिषद् वाक्य है, विज्ञानम् यज्ञम् तनुते। कर्माणि तनुतेऽपि च। विज्ञान से ही यज्ञ का और कर्मों का विस्तार होता है। आगे कहा गया है कि विद्वान् मुमुक्षु विज्ञान को ब्रह्मरूप ही जानते हुए उसके विषय में प्रमाद नहीं करता। पापों को छोड़कर सब भोगों का अनुभव लेता है।

ईशोपनिषद् में भी विद्या एवं अविद्या दोनों को साधने का निर्देश हुआ है। अंधं तमः प्रविशंति येऽविद्यामुपासते। ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायाँरताः। जो केवल अविद्या की, लौकिक विज्ञान की ही उपासना करते हैं वे अंधकार में प्रवेश करते हैं और जो केवल विद्या के, इहलोक से परे के, ही अनुसंधान में लगे रहते हैं वे उससे भी गहन अंधकार में प्रवेश करते हैं। अविद्या और विद्या में संतुलन बनाकर चलना, विद्या के आलोक में अविद्या का अन्वेषण करना, ज्ञान के आलोक में विज्ञान का अनुसंधान करना, यही भारतीय परंपरा है। पश्चिमी परंपरा इससे कुछ भिन्न है, वहाँ विज्ञान में ज्ञान के आलोक की बात नहीं है, विद्या के आलोक में अविद्या का अभ्यास करने की बात नहीं है। उनके लिये विज्ञान अपने-आप में ही संपूर्ण है। यह अंतर तो है। पर भारत में विज्ञान का अभाव है, यह तो सही नहीं हो सकता। विज्ञान और भारतीय ज्ञान में कोई विरोधाभास है, यह भ्रम तो अंग्रेजों के काल में ही पढ़े-लिखे भारतीयों में फैला और यह भ्रम भी भारतीयों के आत्मविश्वास के क्षरण का कारण बना।

इसीलिये स्वामी विवेकानंद अद्वैत के साथ-साथ विज्ञान की भी बात करते हैं, अद्वैत की वैज्ञानिकता की बात करते हैं। भारत आधुनिक काल में अद्वैत और विज्ञान दोनों में सक्षम हो, दोनों में विश्वगुरु बने, ऐसा उनका स्वप्न था। उन्होंने ही जमशेदजी टाटा को भारत में एक बड़ा विज्ञान संस्थान खोलने के लिये प्रेरित किया। उस प्रेरणा से बेंगलुरू का भारतीय विज्ञान संस्थान बना जिसकी आज विश्व के बड़े वैज्ञानिक संस्थानों में गणना होती है। इस घटना का प्रस्तुत पुस्तक में भी उल्लेख हुआ है। भारत के अनेक वैज्ञानिक आज भी स्वामी विवेकानंद की प्रेरणा से भारत को विभिन्न वैज्ञानिक उपक्रमों में विश्व में अग्रणी बनाने के लिये गहन परिश्रम कर रहे हैं।

स्वामी विवेकानंद ने विज्ञान को भारत के मूल अद्वैत दर्शन का धारा के साथ जोड़ा। पर भारत में विज्ञान के प्रति जागरुकता तो स्वामीजी जब कलकत्ता में विद्यालय-महाविद्यालय की पढ़ाई कर रहे थे तभी से आ रही थी। उस समय भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की उन्नति के लिये एक आंदोलन-सा चल पड़ा था। इस आंदोलन का केंद्र कलकत्ता ही था। महेंद्रलाल सरकार, जगदीशचंद्र बसु, प्रफुल्लचंद्र राय, गुरुदास बनर्जी, आशुतोष मुखर्जी, तारकनाथ पलित और सी. वी. रमन जैसे ऊँचे वैज्ञानिक इस आंदोलन के प्रथम प्रणेता थे। उन्हीं दिनों 1876 में, रिचर्ड टैंपल

की विज्ञान के माध्यम से भारतीयों में हीन बोध जगाने की टिप्पणी के एक वर्ष बाद ही, कलकत्ता में इंडियन एसोसिएशन फॉर दि कल्टीवेशन ऑफ साइंस का सूत्रपात हुआ था।

ये सब प्रयास स्वदेशी की भावना से प्रेरित थे। इनके पीछे यह भाव भी था कि विज्ञान भारतीय परंपरा का ही भाग है, कुछ काल से भारत चाहे इसमें कुछ पीछे रह गया हो, पर विज्ञान भारत के लिये नया नहीं है। इसीलिये इस आंदोलन से जुड़े कुछ वैज्ञानिकों ने भारतीय भाषाओं में विज्ञान करने की बात भी की। प्रफुल्लचंद्र राय ने सामान्य उपयोग के उत्पाद बनाने की प्रौद्योगिकी भारत में विकसित एवं स्थापित करने का प्रयास किया। 1916-18 में औद्योगिक आयोग (इंडस्ट्रियल कमीशन) बना। इस आयोग की रिपोर्ट पर अपनी असहमति जताते हुए पंडित मदनमोहन मालवीय ने लिखा कि यह सही नहीं है कि प्रौद्योगिकी की परंपरा पश्चिम से आयी है, ऐसा कह कर हम भारत में पोत निर्माण, लोहा गलाने एवं कपड़ा बुनने, आदि के लंबे इतिहास को नकार रहे हैं। स्वामी विवेकानंद ने अद्वैत की वैज्ञानिकता का प्रतिपादन कर विज्ञान के स्वदेशीकरण के इन प्रयासों के लिये एक सुदृढ़ दार्शनिक आधार प्रस्तुत किया था।

श्री विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी विज्ञान के अध्येता एवं अध्यापक हैं। हिंदी में विज्ञान संबंधी विषयों पर लेखन का उनका लंबा अनुभव है। बच्चों के लिये सरल सुरुचिकर ढंग से वैज्ञानिक विषयों का प्रतिपादन करने में वे विशेष दक्षता रखते हैं। उन जैसे ख्यातिप्राप्त लेखक ने अद्वैत की वैज्ञानिकता एवं स्वामी विवेकानंद के विषय पर यह पुस्तक लिखकर स्वामीजी में रुचि रखने वाले पाठकों को कृतार्थ किया है। इस पुस्तक में संकलित लेखों में स्वामीजी के विज्ञान-संबंधी विचारों के प्राय: सब पहलू आ गये हैं। स्वामीजी के जीवन एवं संदेश से विज्ञान संबंधी अनेक प्रेरणादायक उद्धरणों एवं संस्मरणों का संकलन भी इसमें हो गया है। यह पुस्तक भारतीय परंपरा की वैज्ञानिकता एवं स्वामी विवेकानंद के इस संबंधी विचारों को समझने में सहायक होगी। श्री चतुर्वेदी की सहज सरल भाषा और शैली से यह गहन विषय सब पाठकों के लिये सुलभ हो गया है।

गत जनवरी में स्वामी विवेकानंद के सार्धशती जयंती वर्ष का समापन हुआ। इस अवसर पर देश में छोटे-बड़े सब स्थानों पर और विदेश में भी अनेक स्थानों पर स्वामीजी के जीवन एवं संदेश का स्मरण करते हुए असंख्य आयोजन हुए। करोड़ों लोगों तक स्वामीजी का संदेश पहुँचा, लाखों ने विभिन्न समारोहों में भाग लिया। स्वामीजी के जीवन एवं विचारों के विभिन्न पहलुओं का वर्णन-विश्लेषण करते हुए सैकड़ों पुस्तकें भी इस वर्ष लिखी गयी। विश्व के किसी अन्य महापुरुष की जयंती के एक वर्ष में कदाचित् ही इतना सारा साहित्य लिखा गया हो। श्री विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी की यह पुस्तक इस वृहद् वाङ्मय को और समृद्ध करेगी और भारत की ज्ञान एवं विज्ञान को साथ लेकर चलने की परंपरा को बल देगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

डॉ. जितेंद्र बजाज
निदेशक
समाजनीति समीक्षण केंद्र, चेन्नई एवं दिल्ली

अपनी बात

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा कि भारत को जानना हो तो स्वामी विवेकानंद को पढ़िए। पिछले दिनों स्वामी विवेकानंद के भाषणों को संक्षेप में पुनः लिखते समय मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि इस सृष्टि को समझना हो तो स्वामी विवेकानंद को पढ़िए। जिस विज्ञान को पढ़ कर मैंने उपाधियां पाई तथा उन उपाधियों के बल पर शिक्षक बन कर मैंने जो विज्ञान अपने विद्यार्थियों को पढ़ाया उसमें धर्म के लिए कोई स्थान नहीं है। मैकाले के रंग में रंगी शिक्षा व्यवस्था में विज्ञान को धर्म के विरोधी के रूप में प्रतिपादित किया जाता रहा है। वर्तमान भारतीय समाज में धर्म का अर्थ पूजा-पाठ, कर्मकाण्ड, साधु-सन्त, कथा-कीर्तन आदि से अधिक नहीं है। धर्म का प्रमुख उद्देश्य समाज में नैतिकता का प्रचार करना ही प्रतीत होता है। धर्म को सृष्टि की कार्यप्रणाली से जोड़ कर नहीं देखा जाता।

स्वामी विवेकानंद के भाषणों को पढ़ने पर मैंने पाया कि भाषणों में अद्वैतवाद के रूप में विज्ञान के नियमों का अधिकारपूर्वक उल्लेख किया गया है। स्वामी जी ने यह स्थापित किया कि भारत में धर्म का अर्थ मात्र कर्मकाण्ड नहीं है अपितु सृष्टि के सृजन को समझना है। स्वामी विवेकानंद ने विश्व को यह भी बताया कि अद्वैतवाद ही विश्व का एक मात्र धर्म है जो विज्ञान की कसौटी पर खरा उतरता है। अद्वैतवाद सृष्टि की उत्पत्ति तथा उसकी कार्य प्रणाली को समझा कर मानव को उसके अनुरूप जीवन जीने की प्रेरणा देता है।

अद्वैतवाद की स्थापना उपनिषदों में की गई थी। स्वामी गुणपाद (छठी शताब्दी) ने इसे विस्तार दिया व शिष्य स्वामी गोविन्द भगवत्पाद को पढ़ाया। स्वामी गोविन्द भगवत्पाद के शिष्य जगतगुरु शंकराचार्य ने इसे भारत भर में प्रचारित किया तो स्वामी विवेकानंद ने इसे विश्वभर में प्रसारित कर दिया। स्वामी विवेकानंद की महानता देखिए कि भाषणों में कही गई बातों का श्रेय लेने का कभी भी प्रयास नहीं किया। स्वामी विवेकानंद ने कहा है कि मैंने कुछ भी नया नहीं कहा है। जो कहा, सब भारत के आदि ग्रन्थों में वर्णित है। स्वामी जी का कहना था कि उन्होंने भारत के प्राचीन ज्ञान को नई परिभाषा में ही प्रस्तुत किया है, मगर बात इतनी सरल नहीं है। स्वामी विवेकानन्द ने अद्वैत को आधुनिक विज्ञान के सन्दर्भ में प्रस्तुत किया था तभी वह अमेरिकियों के गले उतर पाया। अद्वैतवाद की प्राचीनता को जाँचने की दृष्टि से लंदन के एक श्रोता ने स्वामी जी से प्रश्न किया की भारत के ऋषियों ने प्राचीनकाल में ही यह सब खोज लिया था तो वे ऋषि आपकी तरह भाषण देने के लिए लंदन क्यों नहीं आए। इस पर स्वामी जी ने कहा कि ऋषि लंदन कैसे

आते? उस समय तो लंदन का कहीं अस्तित्व ही नहीं था।

विज्ञान की कार्य प्रणाली को लेकर स्वामी जी का आत्मविश्वास भी प्रेरणादायक रहा है। जिस समय यह माना जाता था कि भारत उतना ही विज्ञान जानता है जितना पश्चिम ने उसे सिखाया है तब स्वामी जी द्वारा विज्ञान की कार्य प्रणाली पर कटाक्ष करना बहुत बड़ी बात थी। स्वामी जी ने कहा कि यह सही है कि धार्मिक क्षेत्र में अनेक अन्धविश्वास फैले हैं पर विज्ञान भी अंधविश्वासों से मुक्त नहीं है। स्वामी जी का कहना है कि वैज्ञानिकों को कोई बात मात्र इसी कारण नहीं ठुकरा देनी चाहिए कि वह बात किसी संन्यासी द्वारा कही गई है। वैज्ञानिकों को प्रयोग के आधार पर ही सन्तों की बात की सत्यता का पता करना चाहिए। वैज्ञानिक जिस तरह धार्मिक अंधविश्वास का विरोध करते हैं उसी तरह विज्ञान को जगत के अंधविश्वास को तोड़ने का प्रयास करना चाहिए। विज्ञान की अपनी सीमाएं हैं। अधिकतर विज्ञान परिकल्पनाओं के रूप में ही है । यह प्रसन्नता की बात है कि स्वामी विवेकानंद का वह कथन आज सत्य सिद्ध हुआ है। आज अनेक ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक, विज्ञान की कमजोरी को सार्वजनिक तौर पर स्वीकारने लगे हैं।

वर्तमान भारतीय पीढ़ी के लिए यह प्रेरणास्पद बात है कि स्वामी जी का भारत द्वारा सृजित ज्ञान की वैज्ञानिकता पर पूर्ण विश्वास था। स्वामी जी ने कहा है कि सृष्टि की उत्पति कैसे हुई प्रश्न का उत्तर जानने के प्रयास प्राचीनकाल से ही होते रहे हैं और आगे भी होते रहेंगे। वर्तमान में सर्न प्रयोगशाला जिनेवा में महाप्रयोग के रूप में किए जा रहे प्रयोग स्वामी जी की बात का प्रमाण है। स्वामी जी का मानना था कि हर प्रयास के साथ भारत द्वारा अद्वैतवाद के रूप दिए गए, सृष्टि की उत्पति के सिद्धान्त की पुष्टि होती चली जाएगी।

अद्वैतवाद का कहना है कि सम्पूर्ण सृष्टि चेतना का विस्तार मात्र है। जगत के रूप में जो विविधता दिखाई देती है वह मात्र नाम व रूप का अन्तर है। वास्तव में जगत का अस्तित्व नहीं है। अद्वैतवाद में इसे माया कहा गया है। अद्वैतवाद कहता है कि मस्तिष्क की चेतना से ऊपर अतिचेतन अवस्था होती है जिसे प्राप्त कर लेने पर व्यक्ति के सामने से माया का पर्दा हट जाता है और उसे जगत में एकत्व दिखाई देने लगता है।

अद्वैतवाद समय व स्थान के स्वतन्त्र अस्तित्व को स्वीकार नहीं कर उसे सापेक्ष मानता है। कुछ वर्ष पूर्व तक विज्ञान, अद्वैतवाद की इन अवधारणों को स्वीकार नहीं करता था। विज्ञान ज्यों–ज्यों सृष्टि के नियमों की गहराई में पहुँच रहा है, विज्ञान में सृष्टि की संरचना को समझाने वाले भारत के सनातन धर्म, अद्वैतवाद की स्वीकार्यता बढ़ती जा रही है। आज विश्व के अनेक प्रतिष्ठित वैज्ञानिक 'समय' व 'स्थान' के स्वतन्त्र अस्तित्व को नकारने लगे हैं। ऐसे ही एक प्रयास के रूप में नोबल पुरस्कार प्राप्त वैज्ञानिक व अन्तरिक्ष यात्री ने बायोसेन्ट्रिक सिद्धान्त प्रतिपादित किया है। बायोसेन्ट्रिक सिद्धान्त में जगत के स्वतन्त्र अस्तित्व को नकारते हुए, उसे चेतना के विस्तार के रूप में प्रतिपादित किया गया है।

विज्ञान व अद्वैतवाद (साइन्स एण्ड नोनडुएलिटी) जैसे संगठन बहुत गम्भीरता से अद्वैतवाद की वैज्ञानिकता की जाँच करने में लगे हैं मस्तिष्क की कार्य प्रणाली को समझने के आधुनिक उपकरणों के उपलब्ध हो जाने से चेतना को समझने के प्रयासों में तेजी आई है। भारहीन कणों की खोज ने भी अद्वैतवाद को पुख्ता किया है। चेतना को उपहास का विषय नहीं मानकर विज्ञान का एक कठिन प्रश्न स्वीकारा जाने लगा है। यह माने जाने लगा है कि विज्ञान के साधन सीमित हैं, उनके सहारे सृष्टि के समस्त रहस्यों को नहीं जाना जा सकता। इसके लिए अध्यात्म की विधियों की वैज्ञानिकता को स्वीकार कर उनके माध्यम से आगे बढ़ना चाहिए।

मैं न तो अद्वैतवाद का विशेषज्ञ हूँ और न ही भौतिक विज्ञानी। विज्ञान के एक विद्यार्थी के नाते यह अनुभव करता हूँ कि स्वामी विवेकानंद ने अद्वैतवाद को जो वैज्ञानिक आधार प्रदान किया उसे आगे बढ़ाने में भारत के बहुत ही कम लोगों ने योगदान दिया है। स्वामी विवेकानंद की सार्धशती मनाने के रूप में हमें एक अवसर मिला है कि हम अपने देश की प्राचीन धरोहर के सही रूप को पहचान कर उसको आगे बढ़ाएं। मेरा मानना है कि अद्वैतवाद सृष्टि सृजन को समझाने का सबसे प्राचीन प्रयास है। इसे भारत के विज्ञान के पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाना चाहिए। इसी में विश्व कल्याण भी निहित है।

अन्त में, अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर जी का धन्यवाद ज्ञापित करना चाहूँगा जिनके सुझाव तथा निरन्तर प्रबोधन से यह कार्य पूर्ण हो पाया। मैं धन्यवाद करना चाहूँगा धर्मपत्नी श्रीमती शैल चतुर्वेदी का जिन्होंने अध्ययन व लेखन की सुविधाएं जुटाने में पूर्ण सहयोग किया। मैं धन्यवाद करना चाहूंगा शैक्षिक मंथन के संपादक प्रो. संतोष पाण्डेय व संपादन सहयोगी श्री भरत शर्मा का जिन्होंने आलेखों का प्रथम वाचन कर उन्हें सुधार कर सहयोग किया। श्री अजीत झा ने पर्दे के पीछे रह कर आलेख व पुस्तक संवारने का कार्य भी सराहनीय किया है। मैं आभारी हूँ अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ का, जिसने स्वामी विवेकानन्द जी के कार्य को नई पीढ़ी तक पहुँचाने हेतु इस प्रकाशन का निर्णय लिया।

– विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

सबल भारत के प्रबल समर्थक : स्वामी विवेकानन्द

भारत को आज एक युवा राष्ट्र के रूप में पहचाना जा रहा है, ऐसे में चिरयुवा व्यक्तित्व स्वामी विवेकानंद ही उसकी प्रेरणा का सर्वोत्तम स्त्रोत हो सकते हैं। स्वामी विवेकानन्द ने हिन्दू संस्कृति को उस समय विश्व में मान्यता दिलवाई जब भारतीयों का आत्मविश्वास रसातल में गया हुआ था। स्वामी विवेकानन्द ने आध्यात्मिक प्रवाह के साथ-साथ राष्ट्रीयता का शंखनाद कर, भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन में नई जान फूंक दी थी। भारत में शिक्षा की दयनीय स्थिति के लिए, चिन्ता प्रकट करने के साथ उसमें सुधार के लिए जो प्रयास स्वामी विवेकानंद ने किए वे आज भी हमारा मार्गदर्शन करते हैं।

सरस्वती के कृपा पात्र

स्वामी विवेकानन्द का जन्म बालक नरेन्द्रनाथ दत्त के रूप में कोलकाता के एक कायस्थ परिवार में हुआ था। माँ भुवनेश्वरी देवी धार्मिक विचारों की महिला थी तो पिता विश्वनाथ दत्त तार्किक सोच वाले व्यक्ति, स्वामी विवेकानन्द के जीवन पर दोनों का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। कुशाग्र बुद्धि नरेन्द्र ने बचपन में ही लोगों को प्रभावित करना प्रारम्भ कर दिया था। सरस्वती की बालक नरेन्द्र पर विशिष्ट कृपा रही। वह सरसरी नजर से जो कुछ पढ़ लेते वह उन्हें याद हो जाता था। इस कारण बहुत कम समय में वे इतना कुछ पढ़ लिख सके जो किसी सामान्य व्यक्ति के लिए कई जन्मों में भी सम्भव नहीं होता। बालक नरेन्द्र के अध्ययन का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत था। 14 से 16 वर्ष की आयु में नरेन्द्र अपने पिता के साथ रायपुर में रहे। रायपुर को स्वामी विवेकानंद का आध्यात्मिक जन्म स्थान माना जाता है। अध्ययनशील नरेन्द्र ने दर्शन, धर्म, इतिहास, समाज विज्ञान, कला, साहित्य आदि अनकानेक विषयों का गहन अध्ययन किया। भारतीय संस्कृति के आधार ग्रन्थ वेद, उपनिषद, भगवत गीता, रामायण, महाभारत, पुराण आदि का विशद अध्ययन किया। विकासवाद के सिद्धान्त से वे बहुत प्रभावित थे। खेलकूद व भोजन बनाने में रुचि रखने के साथ उस्ताद बेनीगुप्ता व अहमद खाँ से विधिवत संगीत शिक्षा प्राप्त की थी। रुचि के कारण प्रमुख पाश्चात्य साहित्यकारों को भी नरेन्द्र ने गम्भीरता से पढ़ा। अपने आध्यात्मिक गुरु स्वामी रामकृष्ण के सम्पर्क में आने का कारण भी अंग्रेजी लेखक विलियम वर्ड्सवर्थ बना। महाविद्यालय के प्रिन्सीपल डब्लू-हेस्टी द्वारा वर्ड्सवर्थ की रहस्यवादी कविता 'दी एक्सकर्शन' पढ़ाते समय कविता में आए 'ट्रान्स' शब्द की सही व्याख्या जानने के लिए दक्षिणेश्वर के स्वामी रामकृष्ण के पास जाने की